भारत में गणित की उज्ज्वल परम्परा

कक्षा- नवम्

वैदिक गणित

सूत्र-ऊर्ध्वतिर्यग्भ्याम्

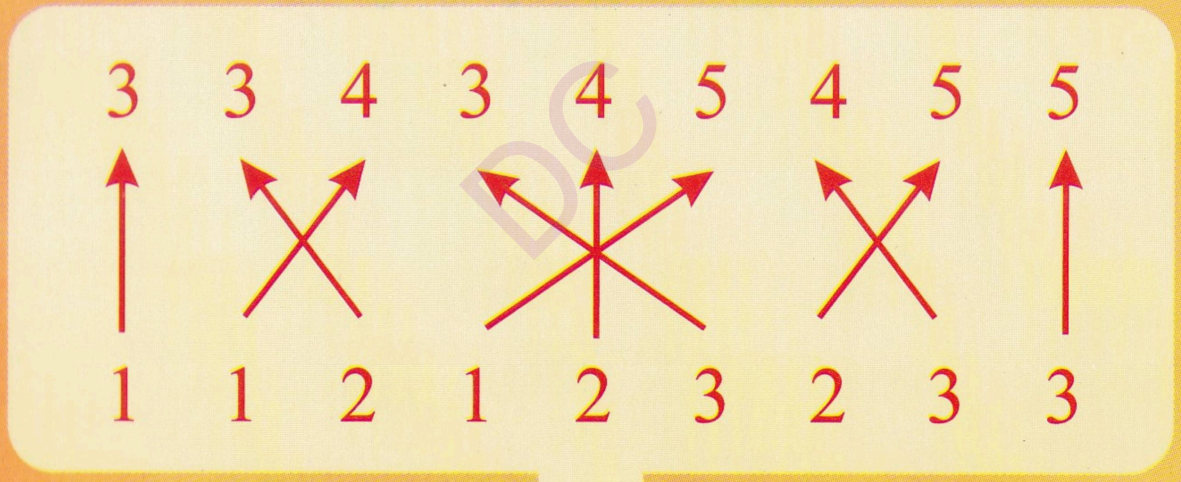

$$\begin{array}{r} 3\ 4\ 5 \\ \times\ 1\ 2\ 3 \\ \hline 3/_{1}0/_{2}2/_{2}2/_{1}5 \end{array} = 42435$$

भारत में गणित की उज्ज्वल परम्परा

कक्षा - नवम्

प्रकाशक :
विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान
संस्कृति भवन, कुरुक्षेत्र- 136118 (हरियाणा)

प्रकाशक :

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान
संस्कृति भवन, कुरुक्षेत्र-136 118
दूरभाष/फैक्स : 01744-251903, 270515
Website : www.samskritisansthan.com
E-mail : sgp@samskritisansthan.org

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण : विक्रमी संवत् २०७९, युगाब्द ५१२४ (सन् 2022)

ISBN— ISBN 978-93-85256-97-4
9 789385 256974

मूल्य : ₹ 30.00

मुद्रक : एस.जी. प्रिंट पैक्स प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा

भाग-3

भारत के प्रमुख गणिताचार्य

अध्याय-6

आर्यभट प्रथम

आर्यभट का जन्म 476 ई॰ में बिहार के कुसुमपुर में हुआ था। कुसुमपुर को बाद में पाटलिपुत्र कहा गया है और वर्तमान में यह बिहार की राजधानी पटना है। पटना के पास ही खगौल और तारेगना नामक स्थान है। मान्यता है कि यहाँ आर्यभट की वेधशाला थी जहाँ वे खगोल का निरीक्षण करते थे। यह समय भारत का स्वर्ण युग था। इस समय सम्पूर्ण भारत मगध शासक के निर्देशन में चहुँमुखी प्रगति कर रहा था। इसी काल में आर्यभट ने 23 वर्ष की आयु में सन् 499 ई॰ में **आर्यभटीय** नामक ग्रंथ की रचना की।

इस ग्रन्थ के चार प्रमुख भाग हैं :-

1. गीतिका पाद 2. गणित पाद 3. कालक्रिया पाद 4. गोल पाद।

गीतिका पाद में 13 श्लोक, गणित पाद में 33 श्लोक, कालक्रिया पाद में 25 श्लोक तथा गोल पाद में 50 श्लोक हैं। इस प्रकार आर्यभटीय ग्रन्थ में 121 श्लोक हैं।

आर्यभटीय के गणित पाद में जो विषय दिए हैं वे इस प्रकार हैं: संख्या स्थान निरूपण, वर्ग और घन, परिकर्म, वर्गमूल, घनमूल, त्रिभुज, वृत्त और समलम्ब चतुर्भुज के क्षेत्रफल तथा गोल और पिरामिड का आयतन तथा π का मान, $R \times \sin$ सारणी, श्रेढी गणितम्, त्रैराशिक, व्यस्त त्रैराशिक, पंचराशिक, सप्तराशिक, विपरीत कर्म, युगपत समीकरण, कुट्टक।

आर्यभटीय पर भास्कर प्रथम (629 ई॰) ने भाष्य लिखा है। यह भाष्य बहुत प्रसिद्ध है। **आर्यभट का योगदान** अतुलनीय है। महत्वपूर्ण बिन्दुओं में से कुछ बिन्दुओं का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

1. संख्याओं को व्यक्त करने की वर्णांक प्रणाली आर्यभट की मौलिक खोज है।

2. त्रैराशिक, पंचराशिक, सप्तराशिक के नियम आर्यभट ने दिये हैं। इस प्रकार के नियम देने वाले वे प्रथम गणितज्ञ हैं।

3. π का मान : आर्यभट के अनुसार

चतुरधिकम् शतमष्टगुणम् द्वाषष्टिस्तथा सहस्राणाम्।
अयुतद्वयविष्कम्भस्यासन्नो वृत्तपरिणाहः ॥ 10 ॥

अर्थ : सौ में चार जोड़कर 104 को 8 से गुणा करें और इसमें 62000 जोड़ें। यह योगफल 20000 व्यास के वृत्त की परिधि का लगभग माप होगा।

अर्थात् 20000 व्यास के वृत्त की परिधि लगभग 62832 होगी।

$$\text{पाई } (\pi) = \frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}}$$

$$= \frac{62832}{20{,}000} = 3.1416 \text{ लगभग}$$

आर्यभट पहले गणितज्ञ हैं जिन्होंने परिधि और व्यास के अनुपात अर्थात् (π) पाई का यह लगभग मान 3.1416 ज्ञात किया।

4. कुट्टक ($ax+by=\pm c$) जहाँ सभी संख्याएं पूर्णांक हैं। समीकरण हल करने की विधि देने वाले आर्यभट प्रथम गणितज्ञ हैं।

5. R × sine सारणी 0^0 से 90^0 तक उन्होंने दी है। अपनी सारणी में R × sine के मानों का अंतर लिखकर $\frac{y-y_1}{x-x_1}$ चलन कलन (Calculus) की ओर अपना कदम बढ़ाया है। इस प्रकार की सारणी देने वाले वे प्रथम गणितज्ञ हैं। इस सारणी में दिए गए मानों की शुद्धता उल्लेखनीय है। वे त्रिकोणमिति के आविष्कर्ता हैं।

6. ज्यामिति में त्रिभुज का क्षेत्रफल तथा जीवा और व्यास से सम्बन्धित अनेक सिद्धान्त उन्होंने दिए हैं।

7. पृथ्वी गोल है। ऐसा कहने वाले वे प्रथम खगोलशास्त्री हैं।

8. ग्रह स्वयं प्रकाशित नहीं है। उनका जो भाग सूर्य के सामने आता है उसी में प्रकाश रहता है, यह जानकारी आर्यभट ने दी।

9. सूर्य स्थिर है तथा पृथ्वी आदि ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। यह बात आर्यभट ने बताई है।

10. आर्यभट ने सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण के कारणों को स्पष्ट किया है। **छादयति शशी सूर्य शशिनं महती च भूच्छाया ॥ 37 ॥**
अर्थ- चन्द्रमा, सूर्य को ढकता है तथा चन्द्रमा को पृथ्वी की छाया ढकती है।

आर्यभट का कार्य परवर्ती गणितज्ञों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुआ। आर्यभट की प्रसिद्धि भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी है। महान खगोलशास्त्री एवं गणितज्ञ होने के कारण अरब वासी इन्हें **"अरज भर"** नाम से पुकारते थे।

भारत ने **19 अप्रैल 1975** को अन्तरिक्ष में अपना **पहला उपग्रह** छोड़ा। उसका नाम **आर्यभट** रखकर **आर्यभट** के योगदान के प्रति सम्मान प्रकट किया है।

■■■

वराहमिहिर

वराहमिहिर का जन्मकाल पांचवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में माना जाता है। विक्रम सं॰ 556 तद्नुसार 499 ई॰ के लगभग इनका जन्मकाल है। उज्जैन मध्य प्रदेश से 20 किलोमीटर दूरी पर स्थित कायथा (कायित्थका) नामक स्थान इनका जन्म स्थान है।

वराहमिहिर के पिता का नाम आदित्य दास था। इनके माता-पिता सूर्य के उपासक थे। वराहमिहिर ने कायित्थका में एक गुरुकुल की स्थापना की थी। वराहमिहिर के छः प्रमुख ग्रन्थ हैं -

1. पंच सिद्धान्तिका
2. बृहज्जातक
3. बृहद्यात्रा
4. योगयात्रा
5. विवाह पटल
6. बृहत् संहिता।

इन ग्रन्थों में पंच सिद्धांतिका एवं बृहत् संहिता विशेष प्रसिद्ध हैं। पंच सिद्धांतिका में वराहमिहिर ने पाँच सिद्धांतों का सम्पादन किया है। ये सिद्धांत 1. पौलिश 2. रोमक 3. वशिष्ठ 4. सौर 5. पितामह नाम से हैं।

वराहमिहिर ज्योतिष के साथ-साथ खगोल विज्ञान के भी ज्ञाता थे। पंच सिद्धांतिका के प्रथम खण्ड में खगोल विज्ञान पर व्यापक विचार मिलता है। चतुर्थ अध्याय में त्रिकोणमिति से सम्बन्धित निम्नलिखित सूत्र मिलते हैं। इन्हें वर्तमान पद्धति में इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं-

1. $R \sin 30^0 = \frac{R}{2}$

2. $R \sin 60^0 = \frac{\sqrt{3}}{2} R$

3. $R \sin 90^0 = R$

4. $(R \sin A)^2 = \frac{R}{2}(R - R\cos 2A)$

5. $(R \sin A)^2 + (R \cos A)^2 = R^2$

6. $R \sin\left(\frac{\pi}{2} - A\right) = \sqrt{R^2 - (R \sin A)^2}$

7. $\sin^2 A = \frac{1}{2} - (1 - \cos 2A)$

इसी प्रकार वराहमिहिर ने 24 ज्या मान (R sin A value) वाली ज्या सारणी (Sine Table) दी है।

वृहत् संहिता ग्रन्थ के पाँच खण्ड हैं। इनमें गणित का प्रचुर प्रयोग विद्यमान है। वराहमिहिर विश्व के प्रथम गणितज्ञ हैं जिन्होंने संचय और विकल्प ज्ञात करने के लिए एक पद्धति विकसित की है जिसे भट्टोत्पल नामक टीकाकार ने "लोष्ठक-प्रस्तार" यह नाम दिया। यह रचना पास्कल त्रिकोण से सर्वथा भिन्न है। इसके अनुप्रयोग से ${}^nC_r$ तथा ${}^nP_r$ के मान प्राप्त होते हैं। गन्धयुक्ति नामक प्रकरण में इसी आधार पर 48000 से भी अधिक सुगन्धित द्रव्य, धूप, तेल आदि की संकल्पना विद्यमान है।

इसी प्रकरण में "कच्छपुट" शीर्षक के अन्तर्गत्त 16 पदार्थों को 4×4 भद्रचतुर्भुज (माया वर्ग) (Magic Square) में स्थापित कर उनके पूर्वनिश्चित प्रमाणों का योग भद्रांक (Magic Constant) 18 होने वाले सभी संचय सुगन्धित द्रव्य निर्माण हेतु सुयोग्य माने गए हैं। यह चतुर्भुज Pandiagonal Magic Square होने के साथ-साथ Most Perfect Magic Square भी है।

इन ग्रन्थों से हमें प्राचीन भारतीयों की वैज्ञानिक दृष्टि एवं अनुसंधान वृत्ति का ज्ञान प्राप्त होता है।

वराहमिहिर की बहुमुखी प्रतिभा के कारण उनका विशिष्ट स्थान है। इनका निधन लगभग 644 वि०सं० अर्थात् 587 ई० के आस-पास हुआ।

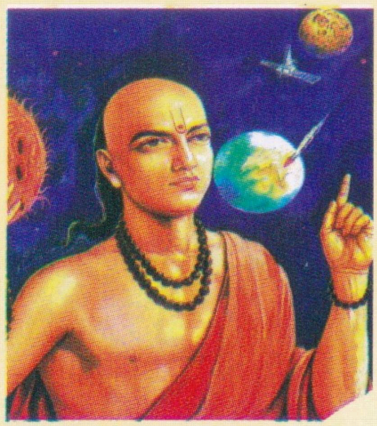

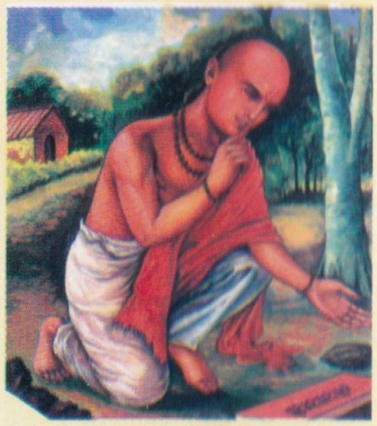

चतुरधिकम् शतमष्टगुणम्
द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम।
अयुत्द्वयविष्कम्भस्यासन्नो
वृत्तपरिणाहः॥

व्यासे भनन्दाग्निहते विभक्ते
खबाणसूर्यैः परिधिस्तु सूक्ष्मः।
द्वाविंशतिघ्नेविहृतेऽथ शैलैः
स्थूलोऽथवा स्याद्व्यवहारयोग्यः॥

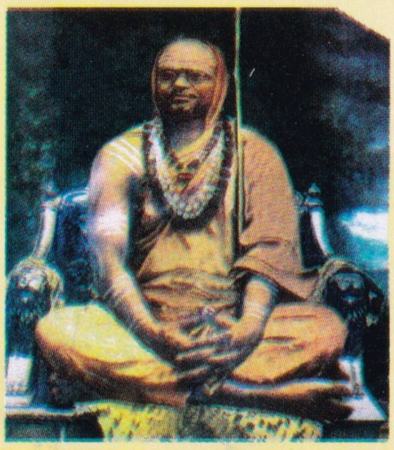

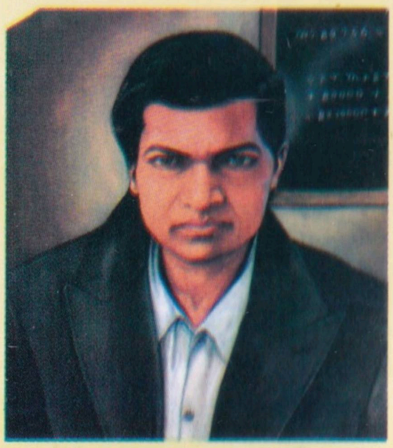

Printed at : S G Printpacks Pvt. Ltd., Noida.

प्रकाशक
विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान
संस्कृति भवन, सलारपुर रोड, कुरुक्षेत्र-136118 (हरियाणा)
01744-251903, 270515 / 9812520301, 7419996400, 7419996300, 7419996200

ISBN 978-93-85256-97-4
9 789385 256974
₹ 30.00

sgp@samskritisansthan.org www.samskritisansthan.com vidyabhartikurukshetra vidyabhartisss vbsss kkr

भारत में गणित की उज्ज्वल परम्परा

कक्षा- दशम्

वैदिक गणित

सूत्र-आनुरूप्येण

41^2	=	16	4	1
			4	
	=	16	8	1

उत्तर = 1681

41^3	64	16	4	1
		32	8	
	68	9	2	1

उत्तर = 68921

भारत में गणित की उज्ज्वल परम्परा

कक्षा - दशम्

DC

प्रकाशक :

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान

संस्कृति भवन, कुरुक्षेत्र- 136118 (हरियाणा)

प्रकाशक :

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान

संस्कृति भवन, कुरुक्षेत्र-136 118

दूरभाष/फैक्स : 01744-251903, 270515

Website : www.samskritisansthan.com

E-mail : sgp@samskritisansthan.org

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण : विक्रमी संवत् २०७९ युगाब्द ५१२४ (सन् 2022)

ISBN 978-93-85256-98-1

ISBN - 9 789385 256981

मूल्य : ₹ 30.00

मुद्रक : एस॰जी॰ प्रिंट पैक्स प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा

भाग-3
भारत के प्रमुख गणिताचार्य
अध्याय-7
ब्रह्मगुप्त

ब्रह्मगुप्त का जन्म 598 ई॰ अर्थात् 520 शक संवत् (541 विक्रमी संवत्) में हुआ था। इनके पिता का नाम जिष्णु था। इनका जन्म स्थान भीनमाल, माउण्ट आबू राजस्थान में है। यह गुजरात सीमा से लगा हुआ है। भिन्न माल या भिल्लमाल या श्रीमाल नगर आबू पर्वत के निकट 65 किलोमीटर पश्चिमोत्तर में लूनी नदी के तट पर बसा उत्तर गुजरात की राजधानी थी। ब्रह्मगुप्त के समय यह एक वैभवशाली नगर था। उस समय उत्तर भारत में हर्षवर्धन का शासन था। ब्रह्मगुप्त उज्जैन गुरुकुल के प्रमुख खगोल शास्त्री थे। उन्होंने 30 वर्ष की आयु (628ई॰) में **''ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त''** नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना **पद्य** में की। ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त भारतीय खगोल शास्त्र का प्रामाणिक एवं मानक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में **24 अध्याय तथा 1080 श्लोक** हैं। इस ग्रन्थ में गणित एवं ज्योतिष की विशेष एवं व्यापक जानकारी दी गयी है।

ब्रह्मगुप्त ने गणित को दो भागों में बांटा –

1. पाटी गणित
2. कुट्टक गणित (जो बाद में बीजगणित के नाम से प्रचलित हुआ।)

इस ग्रन्थ के अतिरिक्त इन्होंने 665 ई॰ में 67 वर्ष की आयु में एक दूसरे ग्रन्थ **''खण्डखाद्यकम्''** नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें विशेषकर अंतर्वेशन (Interpolation) तथा समतल त्रिकोणमिति एवं गोलीय त्रिकोणमिति दोनों में sine (ज्या) और cosine (कोटिज्या) के नियम उपलब्ध हैं। ब्रह्मगुप्त के इन ग्रन्थों के अरबी और फारसी भाषा में अनुवाद के माध्यम से भारत का यह गणित एवं खगोल विज्ञान का ज्ञान अरब तथा बाद में पश्चिम के देशों को प्राप्त हुआ। गणित के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान –

1. वर्गमूल तथा घनमूल ज्ञात करने की सरल विधियाँ दी हैं।
   π का मान $\sqrt{10}$ बताया है।

शून्य के गुणधर्म की व्याख्या की है।

अ−0	=	अ
−अ − 0	=	− अ
0 − 0	=	0
अ × 0	=	0
0 × 0	=	0
0 ÷ 0	=	0
अ ÷ 0	=	तच्छेद (अनंत)

3. वर्गसमीकरण के मूल ज्ञात करने की विधि ब्रह्मगुप्त ने निम्नवत् दी है,

वर्गचतुर्गुणितानां रूपाणां मध्यवर्गसहितानाम्।
मूलं मध्येनोनं वर्गद्विगुणोद्धृतंमध्यः।।

(कुट्टकाध्याय, 18.44)

अर्थ :– माना कि वर्ग समीकरण $ax^2 + bx = c$ है।

तब $x = \dfrac{\sqrt{4ac + b^2} - b}{2a}$

वर्तमान में प्रचलित सूत्र तथा इस विधि में समानता स्वयं स्पष्ट है।

4. $Nx^2 + c = y^2$ इस प्रकार के द्विघाती अनिर्धार्य समीकरणों को हल करने के लिए ब्रह्मगुप्त ने दो पूर्वप्रमेयों (lemmas) का प्रयोग किया है। बाद में इन पूर्वप्रमेयों को **आयलर तथा लाग्रांज** ने भी स्वतंत्र रूप से आविष्कृत किया।

5. ब्रह्मगुप्त का ज्यामिति के क्षेत्र में विशेष योगदान है। इन्होंने त्रिभुज तथा चक्रीय चतुर्भुज के क्षेत्रफल ज्ञात करने का सूत्र दिया है जो इस प्रकार है:

स्थूलफलं त्रिचतुर्भुजबाहु प्रतिबाहुयोगदलघातः।
भुजयोगार्धचतुष्टयभुजोनघातात्पदं सूक्ष्मम्।।

अर्थात् भुजाओं के योग के आधे को चार बार लिखकर भुजाएँ घटाएँ, इन्हें गुणा कर वर्गमूल निकालें।

- चक्रीय चतुर्भुज का क्षेत्रफल $= \sqrt{(s-a)(s-b)(s-c)(s-d)}$

  जहां a, b, c एवं d चक्रीय चतुर्भुज की भुजाएँ हैं तथा

  $2s = a + b + c + d$ है।

- त्रिभुज का क्षेत्रफल $= \sqrt{s(s-a)\,(s-b)\,(s-c)}$ तथा $2s = a+b+c$

6. **ब्रह्मगुप्त प्रमेय** – चक्रीय चतुर्भुज की भुजाएँ ज्ञात होने पर उसके कर्णों की लम्बाइयाँ ज्ञात करने का सूत्र उन्होंने दिया है जो इस प्रकार है

कर्णाश्रितभुजघातैक्यमुभयथान्योन्यभाजितं गुणयेत्।
योगेन भुजप्रतिभुजवधयोः कर्णौ पदे विषमे॥

[क्षेत्रव्यवहार, श्लोक 28]

यदि a, b, c एवं d चक्रीय चतुर्भुज की भुजाएँ हों तो

$$\text{कर्ण-1} = \sqrt{\frac{ad+bc}{ab+cd} \times (ac+bd)}$$

$$\text{कर्ण-2} = \sqrt{\frac{ab+cd}{ad+bc} \times (ac+bd)}$$

यह सूत्र ब्रह्मगुप्त प्रमेय के नाम से प्रसिद्ध है।

7. ब्रह्मगुप्त का पूर्णांक चक्रीय चतुर्भुज : ब्रह्मगुप्त ने ऐसे चक्रीय चतुर्भुजों की रचना करने की विधि बताई जिसमें सभी परिमाण (माप) पूर्ण संख्या हैं। उदाहरणार्थ : भुजाओं की लम्बाई (60, 52, 25, 39), कर्णों की लम्बाई (56, 63), क्षेत्रफल (1764), बहिर्वृत्त का व्यास (65), लघुभुजा का प्रक्षेप (24), कर्णों के प्रतिच्छेद द्वारा निर्मित अन्तःखण्डों के माप (16, 40, 30, 33), कर्णों के अन्तःछेद (36, 20, 48, 15) ये सभी पूर्णांक संख्या है। इस प्रकार के परिणाम देने वाले विश्व के प्रथम गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त हैं। बाद में गणितज्ञ आयलर (1707–1783) ने इस प्रकार के चक्रीय चतुर्भुज बनाने की विधि ज्ञात की।

ब्रह्मगुप्त के गणित के क्षेत्र में मौलिक एवं अद्वितीय योगदान के आधार पर महान गणितज्ञ **भास्कराचार्य** ने उन्हें **'गणक चक्र चूड़ामणि'** की उपाधि से सम्मानित किया है। ब्रह्मगुप्त को अरबी गणितज्ञों का **आदि** गुरु माना जाता है।

विज्ञान के प्रख्यात इतिहासकार **जार्ज सार्टन** का कथन है – "**ब्रह्मगुप्त भारत भूमि के एक महान वैज्ञानिक थे, अपने समय के सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक एवं गणितज्ञ थे।**" निश्चय ही संसार के महान गणितज्ञों में ब्रह्मगुप्त का स्थान **मुकुट माणिक्य** की तरह सर्वोपरि है।

श्रीधराचार्य

श्रीधराचार्य का जन्म 750 ई० (लगभग) कर्नाटक में हुआ। इनकी माता का नाम अव्वोका तथा पिता का नाम बलदेव शर्मा था। बचपन में अपने पिता से संस्कृत एवं कन्नड़ साहित्य का अध्ययन किया।

इनके ग्रन्थ त्रिशतिका के प्रथम श्लोक से ज्ञात होता है कि वे शैव थे –

नत्वा शिवं स्वविरचितपाट्या गणितस्य सारमुद्धृत्य-
लोकव्यवहाराय प्रवक्ष्यति श्रीधराचार्यः॥1॥

अर्थ – शिव को नमस्कार करके स्वविरचित पाटी-गणित से गणित के सार को उद्धृत करते हुए श्रीधराचार्य लोकव्यवहार के लिए उसे निरूपित कर रहे हैं।

गणित के क्षेत्र में श्रीधर के ग्रन्थ अत्यन्त मूल्यवान् हैं। उन्होंने ऐसे अनेक सूत्र प्रदान किये जो इनसे पहले अज्ञात थे। इनके दो ग्रन्थ उपलब्ध हैं –

1. त्रिशतिका (गणितसार) 2. पाटीगणित

गणितसार इनका बहुचर्चित ग्रंथ है। इसमें 300 श्लोक हैं। 300 श्लोक होने के कारण यह ग्रन्थ त्रिशितिका के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ में प्राकृतिक संख्याओं की मात्राएँ, गुणा, भाग, शून्य, वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल, भिन्न, त्रैराशिक, ब्याज, मिश्रण, साझा, मापिकी, छाया मापन आदि का उल्लेख है।

त्रिशतिका में इन्होंने शून्य के गुणों का उल्लेख किया है –

- संख्या + 0 = संख्या
- संख्या – 0 = संख्या
- 0 × संख्या = 0
- संख्या × 0 = 0
- 0 का वर्ग = 0
- 0 का वर्गमूल = 0
- 0 का घन = 0
- 0 का घनमूल = 0

- 0 द्वारा भाग का उल्लेख नहीं किया गया है।

इन्होंने अंकगणित पर नवशतिका, त्रिशतिका और पाटी गणित तथा बीजगणित में पुस्तकों की रचना की।

श्रीधराचार्य का योगदान –

1. दशगुणोत्तर संख्याएँ

एकं दशं शतमस्मात् सहस्त्रमयुतं ततः परं लक्षम्।
प्रयुतं कोटिमथार्बुदमब्जं खर्वं निखर्वं च ॥ 2 ॥
तस्मान्महासरोजं शङ्कुं सरितां पतिं ततस्त्वन्त्यम्।
मध्यं परार्धमाहुर्यथोत्तरं दशगुणाः संज्ञाः ॥ 3 ॥

अर्थ : एक, दश, शत पश्चात सहस्त्र, अयुत, इसके पश्चात् लक्ष, प्रयुत, कोटि, अर्बुद, अब्ज, खर्व, निखर्व, इसके पश्चात् महासरोज, शंकु, सरितांपति अर्थात् समुद्र पश्चात् अन्त्य, मध्य, परार्ध ये क्रमशः दशगुणोत्तर संख्याओं के नाम हैं। परवर्ती गणितज्ञों ने यह नामकरण लगभग कायम रखा है। संख्याओं के मान इस प्रकार हैं :

एकम्	1	10^0
दशम्	10	10^1
शतम्	100	10^2
सहस्त्र	1000	10^3
अयुत	10000	10^4
लक्ष	100000	10^5
प्रयुत	1000000	10^6
कोटि	10000000	10^7
अर्बुद	100000000	10^8
अब्ज	1000000000	10^9
खर्व	10000000000	10^{10}
निखर्व	100000000000	10^{11}

महासरोज	1000000000000	10^{12}
शंकु	10000000000000	10^{13}
सरितापति	100000000000000	10^{14}
अन्त्य	1000000000000000	10^{15}
मध्य	10000000000000000	10^{16}
परार्ध	100000000000000000	10^{17}

2. प्रथम से लेकर क्रमशः n तक संख्याओं के योग का सूत्र श्रीधराचार्य ने प्रतिपादित किया है।
3. अंक गणितीय श्रेढी में विद्यमान संख्याओं के वर्गों के एवं घनों के योग के लिए सूत्र दिये हैं। इस प्रकार के सूत्र देने वाले श्रीधराचार्य प्रथम गणितज्ञ हैं। सूत्र इस प्रकार हैं :

संख्याओं के वर्गों के योग के लिए -

द्विगुणितेनचयेन गणितं मुखसङ्गुणितं निरेकगच्छस्य।
कृतिसङ्कलितेन युतं चयकृतिगुणितेन वर्गयुतिः ॥ 105॥

स्पष्टीकरण

$$a^2+(a+d)^2+(a+2d)^2+....n \text{ पद}$$

$$= a\left[a+(a+2d)+(a+4d)+...n \text{ पद}\right]$$

$$+d^2\left[1^2+2^2+3^2+4^2+....(n-1) \text{ पद}\right]$$

संख्याओं के घनों के योग के लिए :

श्रेढीफलस्य वर्गे प्रचयहते चयविहीनवदनगुणम्।
मुखफलवधं निदध्यादिष्टादिचयेन घनयोगः ॥ 107 ॥

स्पष्टीकरण

$$= a^3+(a+d)^3+(a+2d)^3+...+n \text{ पद}$$

$$= S^2d+S.a.(a-d)$$

$$= a^3 + (a+d)^3 + (a+2d)^3 + \ldots + n$$

जहाँ $S = \frac{n}{2}\left[2a + (n-1)d\right]$

4. **वर्ग समीकरण हल करने की विधि :** वर्गसमीकरण हल करने की श्रीधराचार्य की विधि को वर्तमान में वर्ग पूरक पद्धति (Completing the square) के नाम से जाना जाता है। श्रीधराचार्य का बीजगणित सम्बन्धी साहित्य अनुपलब्ध है, पर भास्कराचार्य ने श्रीधराचार्य का उल्लेख करते हुए यह श्लोक दिया है :–

चतुराहतवर्ग समैः रूपैः पक्षद्वयं गुणयेत्।
अव्यक्तवर्गरूपैर्युक्तौ पक्षौ ततोमूलम्॥

[भास्कराचार्य, बीजगणित प्रकरण 8 श्लोक 4]

अर्थः माना कि वर्ग समीकरण $ax^2 + bx = c$ है। दोनों पक्षों को $4a$ से गुणा करने पर $4a^2x^2 + 4abx = 4ac$

दोनों पक्षों में b^2 जोड़ने पर $4a^2x^2 + 4abx + b^2 = 4ac + b^2$

$$\Rightarrow (2ax + b)^2 = 4ac + b^2$$

$$\Rightarrow 2ax + b = \pm\sqrt{4ac + b^2}$$

$$\Rightarrow x = \frac{-b \pm \sqrt{4ac + b^2}}{2a}$$

5. ज्यामिति में श्रीधराचार्य का योगदान :

क. वृत्तखण्ड का क्षेत्रफल

ख. घनाभ का आयतन

ग. समवृत्तीय बेलन का आयतन

घ. शंकु के आयतन

इन सब के सूत्र **त्रिंशतिका** में विद्यमान हैं। श्रीधराचार्य के ग्रन्थ ऐसे आलोक स्तम्भ की भाँति रहे जिनके प्रकाश में परवर्ती विद्वानों ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

ब्रह्मगुप्त (628 ई०) से भास्कराचार्य (1150 ई०) के मध्य में श्रीधराचार्य (750 ई०) जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। इसलिए कहा गया है कि –

उत्तरतो सुरनिलयं दक्षिणतो मलयपर्वतं यावत्।

प्रागपरोदधिमध्ये नो गणकः श्रीधरादन्यः।।

अर्थात् उत्तर में हिमालय से दक्षिण के मलय पर्वत तक और पूर्व और पश्चिमी समुद्र की सीमा में श्रीधर की तुलना का कोई गणितज्ञ नहीं है।

❑❑❑

DC

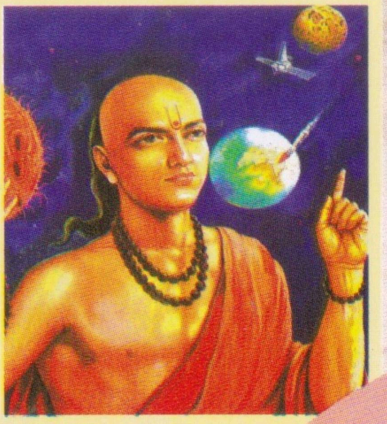

ब्रह्मगुप्त प्रमेय

कर्णाश्रितभुजघातैक्यम् उभयो यथा
अन्योन्यभाजितं गुणयेत्।
योगेन भुजप्रतिभुजवधयो:
कर्णौ पदे विषमे॥

चतुराहतवर्ग समै: रूपै:
पक्षद्वयं गुणयेत्।
अव्यक्तवर्गरूपैर्युक्तौ
पक्षौ ततोमूलम्॥

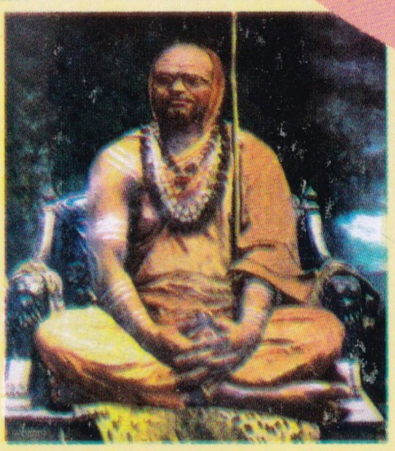

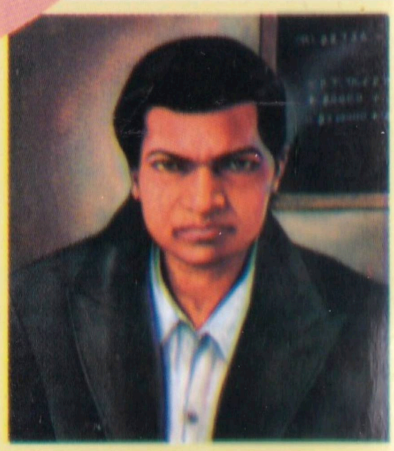

Printed at : S G Printpacks Pvt. Ltd., Noida.

प्रकाशक

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान

संस्कृति भवन, सलारपुर रोड, कुरुक्षेत्र-136118 (हरियाणा)

01744-251903, 270515 / 9812520301, 7419996400, 7419996300, 7419996200

ISBN 978-93-85256-98-1

₹ 30.00

sgp@samskritisansthan.org www.samskritisansthan.com vidyabhartikurukshetra vidyabhartisss vbsss kkr

भारत में गणित की उज्ज्वल परम्परा

कक्षा- नवम्

वैदिक गणित

सूत्र-ऊर्ध्वतिर्यग्भ्याम्

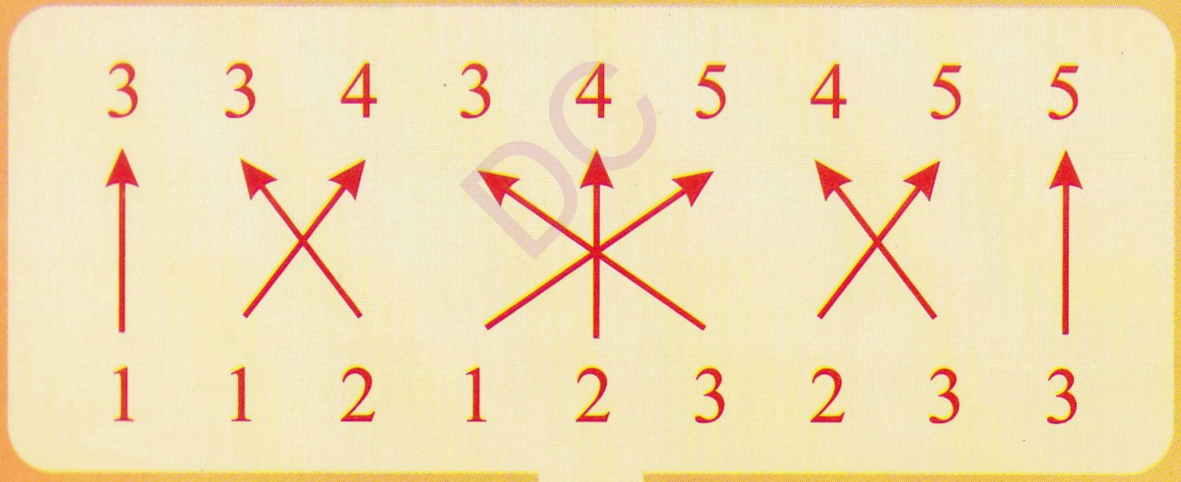

$$\begin{array}{r} 3\ 4\ 5 \\ \times\ 1\ 2\ 3 \\ \hline 3/_{1}0/_{2}2/_{2}2/_{1}5 \end{array} = 42435$$

भाग-1

प्राचीन भारतीय गणित की एक झलक

अध्याय-1

गणित की प्रमुख शाखाओं का विकास क्रम

गणित, विज्ञान एवं तकनीकी का मेरुदण्ड है। वेदांग ज्योतिष में ऋषि लगध ने लिखा है –

यथा शिखा मयूराणाम् नागानाम् मणयो यथा ।
तदवद् वेदांग शास्त्राणाम् गणितम्मूर्धनिस्थितम् ॥

अर्थात् सभी वेदांग शास्त्रों के शीर्ष पर गणित उसी प्रकार सुशोभित्त है जैसे मयूरों के सिर पर शिखा तथा नागों के फन पर मणि सुशोभित है।

गणित के इतिहास पर दृष्टि डालने पर हम देखते हैं कि गणित में भारत का योगदान अत्यन्त विशिष्ट एवं विश्व प्रसिद्ध है। समग्र विश्व की यह अवधारणा है कि अधिकांश गणितीय ज्ञान का उद्भव भारत में ही हुआ है।

प्राचीन काल से ही भारत में गणित की विभिन्न शाखाओं पर कार्य किया गया है।

अंकगणित

अंकगणित्त, गणित की प्रमुख शाखा है। दैनिक व्यवहार में इसका सर्वाधिक उपयोग है। अंकगणित का आधार अंक प्रणाली है, जिसमें शून्य का स्थान महत्वपूर्ण है।

शून्य का आविष्कार- शून्य की संकल्पना वेदों में निहित है। यजुर्वेद में "खं" शब्द का प्रयोग हुआ है। "खं" शब्द का तात्पर्य आकाश और शून्य भी होता है। ज्योतिषादि ग्रन्थों में "खं" को शून्य के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है।

ईशावास्य उपनिषद् में कहा गया है कि-

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुद्च्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

इसका आशय है कि वह पूर्ण है, यह पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण की उत्पत्ति होती है। पूर्ण में से पूर्ण निकाला (घटाया) जाए तो अवशेष भी पूर्ण ही रहेगा।

गणित की दृष्टि से इसमें शून्य एवं अनन्त की संकल्पना समाहित है।

शून्य की संकल्पना का श्रेय महान संस्कृत **व्याकरणाचार्य पाणिनी** (500 ई०पू०) तथा **पिंगल** (200 ई०पू०) को भी दिया जाता है। शून्य का आविष्कार वैदिक ऋषि **गृत्समद** ने किया था। इस प्रकार का भी उल्लेख मिलता है।

शून्य के लिए चिह्न निश्चित करने का सर्वप्रथम साक्ष्य **बक्षाली पांडुलिपि** (300-400 ई०) में पाया जाता है। प्राचीन भारत की अंकीय पद्धति में शून्य तथा इसके चिह्न का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। मध्य प्रदेश के **ग्वालियर में स्थित किले के अन्दर चतुर्भुज मन्दिर में भी शून्य का संकेत होने के प्रमाण प्राप्त हैं।**

लीलावती में भास्कराचार्य ने शून्य के लिए "खं" का प्रयोग किया है -

योगेखंक्षेपसमं, वर्गादौखं, खभाजितो राशि।
खहरः स्यात्, खगुणः खं, खगुणश्चिन्चत्यश्च शेषं विधौ॥

शून्य में किसी संख्या को जोड़ने पर योगफल उस संख्या के तुल्य ही होता है। शून्य के वर्गादि शून्य ही होते हैं। किसी राशि को शून्य से भाग देने पर उस राशि की संज्ञा **खहर** (जिसका हर ख हो) होती है। शून्य से किसी राशि को गुणा करने पर गुणनफल शून्य होता है।

प्रोफेसर जी.बी. हालस्टेड ने कहा है -

"बुद्धि और शक्ति के विकास के लिए गणित की कोई भी संकल्पना शून्य से महत्वपूर्ण सिद्ध नहीं हुई है।"

अंक पद्धतिः विश्व के विभिन्न देशों में प्राचीन काल से संख्या लेखन की अलग-अलग पद्धतियाँ प्रचलित रही हैं जैसे- **देवनागरी, रोमन** तथा **हिन्दू-अरेबिक** संख्या प्रणाली आदि।

प्रो॰ गिन्सबर्ग कहते हैं लगभग 770 ई॰ सदी में उज्जैन के एक **हिन्दू विद्वान कंक** को बगदाद के प्रसिद्ध दरबार में **अब्बासईद खलीफा अलमन्सूर** ने आमंत्रित किया था। इस प्रकार हिन्दू अंकन पद्धति अरब पहुंची। **कंक** ने हिन्दू ज्योतिष विज्ञान तथा गणित जैसे विषय को अरब के विद्वानों को पढ़ाया। **कंक** की सहायता से उन्होंने **गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त के ब्रह्मस्फूट सिद्धान्त** का अरबी में अनुवाद किया।

बी॰बी॰ दत्त के अनुसार-अरब से मिश्र तथा उत्तरी अरब होते हुए अंक धीरे-धीरे यूरोप पहुँचे तथा ग्यारहवीं सदी में पूर्ण रूप से यूरोप पहुँच गए। यूरोपवासियों ने उन्हें अरबी अंक कहा क्योंकि वे उन्हें अरबों से मिले, किन्तु स्वयं अरबों ने एकमत से उन्हें **हिन्दू अंक** कहा (अल-अरकान अल-हिन्दू) इन दस अंकों को अरबवासी **"हिन्दूसा"** कहते हैं।

भारतीय अंक पद्धति पर महान वैज्ञानिक अलबर्ट आइंस्टीन ने कहा है कि -

We owe a lot to the Indians who taught us how to count without which no worth while scientific discovery could has been made.

"हम भारतीयों के बहुत ऋणी हैं, जिन्होंने हमें गिनना सिखाया, जिसके बिना कोई सार्थक वैज्ञानिक खोज नहीं हो सकती थी।"

स्थानीयमान : किसी भी संख्या को शून्य सहित दस अंकों में व्यक्त करना और प्रत्येक अंक को एक निरपेक्षमान और एक स्थानीयमान देने के कारण यह अंक पद्धति वैज्ञानिक अंक पद्धति है। स्थानीय मान आधुनिक संख्या प्रणाली (हिन्दू-अरेबिक प्रणाली) की विशेषता है।

फ्रांस के महान गणितज्ञ **पीयरे लाप्लास** ने लिखा है : **"भारत ने ही हमें प्रत्येक संख्या को दस अंकों द्वारा व्यक्त करने (जिसमें प्रत्येक अंक का एक निरपेक्ष और एक स्थानीय मान है) की**

अत्यन्त उत्तम प्रणाली दी है।" दशमलव पद्धति का आधार दस है। इसी कारण इसे दाशमिक या दशमलव प्रणाली कहते हैं।

भारतीय अंकों का इतिहास एवं बड़ी संख्यायें : भारतीय अंकों का विकास क्रम निम्नलिखित अनुसार है –

- खरोष्ठी प्रणाली (चौथी शताब्दी ई॰पू॰)
- ब्राह्मी प्रणाली (तीसरी शताब्दी ई॰पू॰)
- ग्वालियर प्रणाली (9वीं शताब्दी)
- देवनागरी प्रणाली (11वीं शताब्दी)
- आधुनिक प्रणाली

ई॰पू॰ चौथी शताब्दी से लेकर ईसा पश्चात् दूसरी शताब्दी तक के अभिलेखों में **खरोष्ठी** अंक पाये जाते हैं। **ब्राह्मी अंकों** में दस के अतिरिक्त, सौ तक इसके गुणक तथा नौ सौ तक के सौ गुणक पाये गये हैं।

यजुर्वेद संहिता, रामायण तथा उसके बाद के धार्मिक ग्रन्थों में 1 से लेकर 10^{53} तक की संख्याओं को अलग-अलग नाम दिये गये हैं:

- नियुतम 10^{11}
- उत्संग 10^{21}
- हेतुहीलम 10^{31}
- नित्रवाद्यम् 10^{41}
- तल्लक्षणम् 10^{53}

अंकगणित पर मुख्य रूप से कार्य करने वाले भारतीय गणितज्ञ **आर्यमट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, श्रीधराचार्य, महावीराचार्य, भास्कराचार्य** इत्यादि हैं।

बीजगणित

बीजगणित तथा अंक गणित में संरचना और सिद्धान्त के विचार से अनेक समानताएं हैं। इन दोनों में मुख्य अंतर यह है कि अंक गणित में व्यक्त (ज्ञात) राशि की बात की जाती है जबकि बीजगणित में अव्यक्त (अज्ञात) राशि की बात की जाती है। अव्यक्त राशि से तात्पर्य उस राशि से है जिसका मान प्रारम्भ में ज्ञात न हो। इसे **बीज राशि** भी कहते हैं, इसलिए **अव्यक्त गणित को बीजगणित कहते हैं।**

बीजगणित का उपयोग शुल्वसूत्रों के काल से ही प्रारम्म हुआ प्रतीत होता है, विभिन्न प्रकार की यज्ञवेदियों के निर्माण में ऐसी समस्याएँ उत्पन्न कर दी, जिसके लिए रेखीय (Linear) और अपरिमित समीकरणों का समाधान ढूँढना पड़ा। आर्यभट का अंकगणित के साथ-साथ बीजगणित में भी उल्लेखनीय योगदान है। बीजगणित ब्रह्मगुप्त के काल से ही गणित की एक अलग शाखा के रूप में विकसित हुई। इसे **कुट्टक गणित तथा अव्यक्त गणित** भी कहा जाता था।

गणितज्ञ **पृथूदक स्वामी (869 ई०) ने कुट्टक गणित का नाम बीजगणित रखा।**

रेखागणित (ज्यामिति)

भारतीय गणित के इतिहास पर दृष्टि डालने पर यह ज्ञात होता है कि अपने देश में वैदिक काल में ही रेखागणित की नींव पड़ गई थी।

इसे **क्षेत्रगणित, ऋजुगणित, रज्जुगणित, भूमिति** इत्यादि नामों से भी जाना जाता है।

भूमिति दो शब्दों भू+मिति से मिलकर बना है। भू का अर्थ भूमि तथा मिति का अर्थ मापन होता है। अर्थात् भूमिति का अर्थ भूमि के मापन से है।

वैदिक काल में गणित की जानकारी **कल्प नामक वेदांग** में शुल्व सूत्रों के रूप में मिलती है।

शुल्व सूत्रों के रचयिता- बौधायन, आपस्तंभ, कात्यायन, मानव, मैत्रायण बाधुल आदि जाने जाते हैं। शुल्व सूत्रों में विभिन्न ज्यामिति आकारों की वेदियाँ जैसे **गरुण वेदी, कूर्म वेदी** आदि बनाने का वर्णन है।

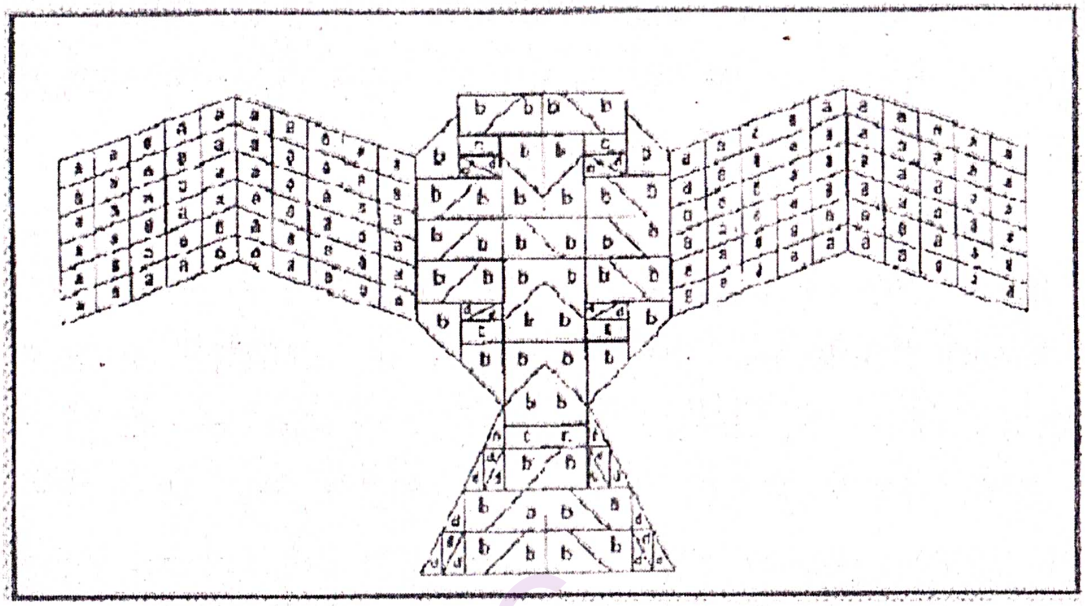

1. गरुण वेदी

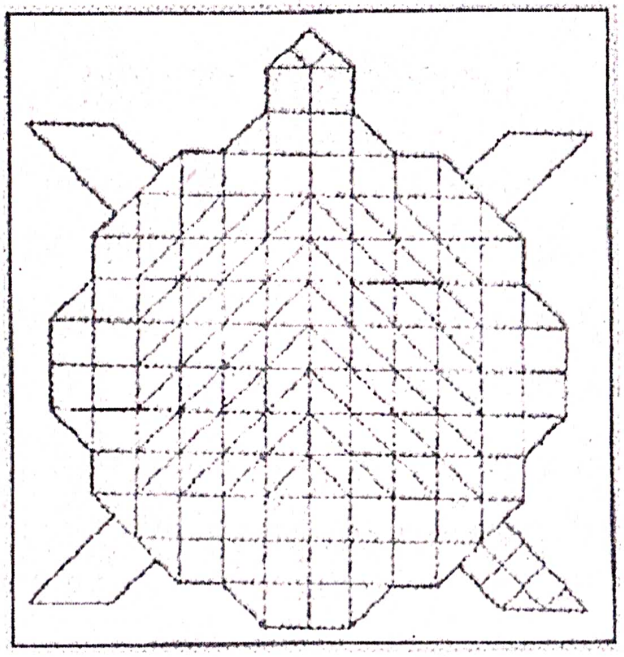

2. कूर्म वेदी

शुल्व सूत्र ज्यामिति के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं –

त्रिभुजों, वर्गों, आयतों तथा अन्य जटिल ज्यामिति आकारों की रचना, ऐसी ज्यामितीय आकारों की रचना के बराबर करना जिनका क्षेत्रफल दिये गये आकारों के क्षेत्र के जोड़ या अन्तर के बराबर हो। वृत्त के क्षेत्रफल के बराबर वर्ग अथवा वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर वृत्त बनाना।

ज्यामिति के क्षेत्र में आर्यभट (476–550 ई०), भास्कर प्रथम (629 ई०), ब्रह्मगुप्त (600 ई०), महावीराचार्य (850 ई०) का विशेष उल्लेखनीय योगदान है।

ज्यामिति का महत्व बताते हुए **जैन गणिताचार्यों** ने उल्लेख किया है कि **"ज्यामिति गणित का कमल है शेष सब तुच्छ है।"**

त्रिकोणमिति

त्रिकोणमिति गणित की वह शाखा है जिसमें त्रिभुज की भुजाओं और कोणों के बीच सम्बन्ध का अध्ययन किया जाता है।

यह गणित की प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण शाखा है। भारतीय ज्योतिषशास्त्र एवं खगोलशास्त्र में इसका उपयोग ग्रहों के स्थान की गणना में होता था।

प्राचीन भारतीय गणितज्ञों आर्यभट, वराहमिहिर तथा ब्रह्मगुप्त आदि का त्रिकोणमिति के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान है।

त्रिकोणमिति की संकल्पनाओं, सूत्रों तथा सारणियों का वर्णन "सूर्य सिद्धान्त" (400 ई०) वराहमिहिर के पाँच सिद्धान्त तथा ब्रह्मगुप्त के ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त (630 ई०) में मिलता है।

डॉ० ब्रजमोहन द्वारा लिखित पुस्तक "गणित का इतिहास" (पृष्ठ 314) में उल्लेख है कि इसमें सन्देह नहीं है कि त्रिकोणमिति फलनों में से तीन की स्पष्ट रूप से परिभाषा सबसे पहले हिन्दुओं ने ही दी थी।

सबसे पहले ज्या का प्रयोग आर्यभट ने (लगमग 540 ई०) किया था। आर्यभट ने ज्या और उत्क्रम ज्या (उज्ज्या) की सारणीयाँ भी दी हैं।

भारत से "ज्या" शब्द अरब गया जहाँ "जीबा" के रूप में प्रचलित हो गया। कुछ समय पश्चात् जीबा "जैब" हो गया। अरबी में

"जैब" का अर्थ "वक्ष" है लगभग 450 ई० में अरबी की पुस्तकों का लेटिन में अनुवाद किया गया तो जैब के स्थान पर साइनस (Sinus) का प्रयोग किया गया है जिसका लेटिन में एक अर्थ **"वक्ष"** भी है।

ब्रह्मगुप्त ने ज्या के अर्थ में ही **"क्रमज्या"** का प्रयोग किया है। इसका यह नाम इसलिए रखा कि "उत्क्रम ज्या" से इसका अंतर स्पष्ट दिखाई पड़े। अरबी में यही शब्द **"करज"** के रूप में प्रचलित हो गया। अलख्वारिजिमी ने भी **"करज"** का ही प्रयोग किया है।

भारतीय ज्या और कोटिज्या ही यूरोपियन भाषाओं में (Sine) और को साइन (co-sine) बन गये।

त्रिकोणमिति का ज्योतिष, खगोलशास्त्र, अभियांत्रिकी आदि के अध्ययन में उपयोग है।

अध्याय-2

पाई (π) का भारतीय इतिहास

1. पाई (π) का मान –

बौधायन शुल्वसूत्र में कहा है कि यूप के लिए खोदे गए एक पद व्यास के वृत्ताकार गढ्ढे की परिमिति तीन पद होती है। इस उदाहरण में पाई (π) का सन्निकट मान 3 लिया गया है।

त्रिपदपरिणाहानी यूपोपराणीति॥

इनको देखकर श्रौतसूत्र काल में भारतीय ज्यामिति (भूमिति) विषयक ज्ञान की उन्नत अवस्था का परिचय प्राप्त होता है।

2. भारतीय जैन गणितज्ञ **यतिवृषभ** ने **"अपने ग्रंथ तिलोय पण्णत्ति"** में पाई (π) का मान $\sqrt{10}$ लिया है।

3. आर्यभट (476 ई॰ 550 ई॰) पहले गणितज्ञ थे जिन्होंने परिधि और व्यास के अनुपात अर्थात् (π) का लगभग परिमित मान निकाला था।

चतुरधिकम् शतमष्टगुणम् द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम।
अयुत्द्वयविष्कम्भस्यासन्नो वृत्तपरिणाहः॥

अर्थात्, सौ में चार जोड़कर उसे 8 से गुणा करें और 62000 जोड़ें। यह योगफल 20,000 व्यास के वृत्त की परिधि होगी।

अतः $\pi = \frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}} = \frac{62832}{20000} = 3.1416$

इस प्रकार आर्यभट के अनुसार $\pi = 3.1416$ है, जो आज भी दशमलव के 4 स्थानों तक शुद्ध है।

4. **ब्रह्मगुप्त** (598 ई॰) ने पाई (π) का मान $\sqrt{10}$ दिया है।

5. **महावीराचार्य** (850 ई॰) ने (π) को दो मान दिये हैं। एक

मान 3 तथा दूसरा मान $\sqrt{10}$ है।

6. **आर्यभट द्वितीय** (950 ई०) ने π का मान $\frac{22}{7}$ दिया है।

7. **भास्कराचार्य** (1114-1193 ई०) ने अपने ग्रंथ लीलावती में पाई (π) का सूक्ष्म एवं स्थूल मान निम्नवत् श्लोक के द्वारा दिया है।

व्यासे भनन्दाग्निहते विभक्ते खबाणसूर्यैः परिधिस्तु सूक्ष्मः।
द्वाविंशतिघ्नेविहृतेऽथ शैलैः स्थूलोऽथवा स्याद्व्यवहारयोग्यः॥

अर्थात्, व्यास को 3927 से गुणा कर 1250 से भाग देने पर **सूक्ष्म परिधि** होती है अथवा व्यास को 22 से गुणा कर 7 से भाग देने पर व्यवहार के योग्य परिधि का **स्थूल मान** प्राप्त होता है। अर्थात्

$$\pi = \frac{3927}{1250} \quad \text{.....} \quad \text{(सूक्ष्ममान)}$$

$$\pi = \frac{22}{7} \quad \text{.....} \quad \text{(स्थूलमान)}$$

8. **माधव** (1340-1425 ई०) ने π का मान दशमलव के ग्यारह स्थानों तक निकाला है।

$\pi = 3.141592653592$

9. **श्रीनिवास रामानुजन** (1887-1920 ई०) - रामानुजन का यूरोप में जो पहला शोध निबन्ध प्रकाशित हुआ उसका शीर्षक था प्रतिरूपक समीकरण और π के सन्निकट मान (मोड्यूलर इक्वेशन एंड एप्रोक्सिमेशन टू π)
उन्होंने π के सन्निकट मान के लिए कई सूत्रों की खोज की।

10. **गणितज्ञ स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ** (1884-1960 ई०) ने पाई/10 का मान निम्नवत् बताया है –

गोपी भाग्य मधुव्रात-श्रृंगिशोदधिसंधिग।
खलजीवितखाताव-गलहालारसंधर।।

स्वामी जी के अनुसार इस श्लोक के तीन उपयुक्त अर्थ निकाले जा सकते हैं। प्रथम अर्थ में भगवान श्रीकृष्ण की स्तुति तथा द्वितीय अर्थ में भगवान शंकर की स्तुति का भाव प्रकट करता है वहीं तीसरे अर्थ में $\pi/10$ का मान दशमलव के बत्तीस स्थान तक प्रदान करता है -

$\pi/10 = 0.31415926535897932384626433832792$

DC

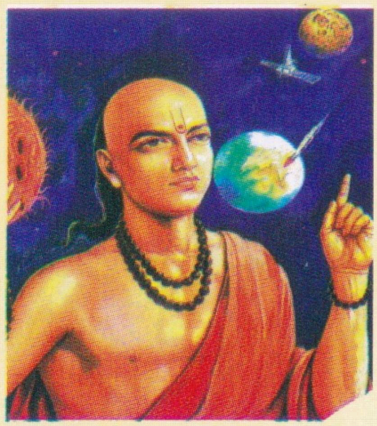

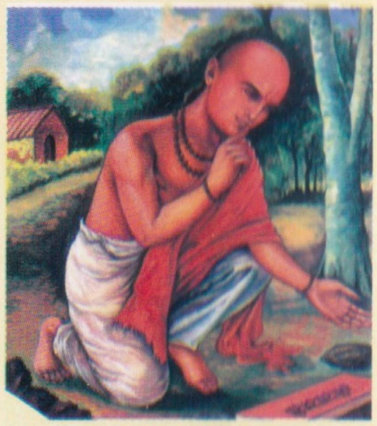

चतुरधिकम् शतमष्टगुणम्
द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम।
अयुत्द्वयविष्कम्भस्यासन्नो
वृत्तपरिणाहः॥

व्यासे भनन्दाग्निहते विभक्ते
खबाणसूर्यैः परिधिस्तु सूक्ष्मः।
द्वाविंशतिघ्नेविहृतेऽथ शैलैः
स्थूलोऽथवा स्याद्व्यवहारयोग्यः॥

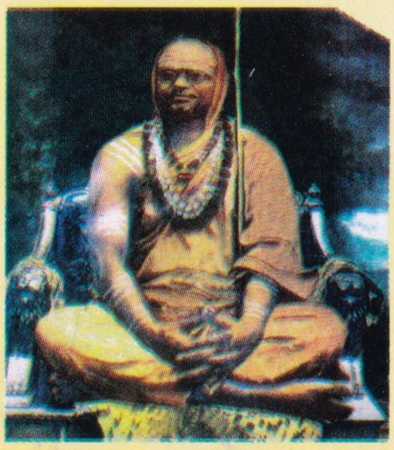

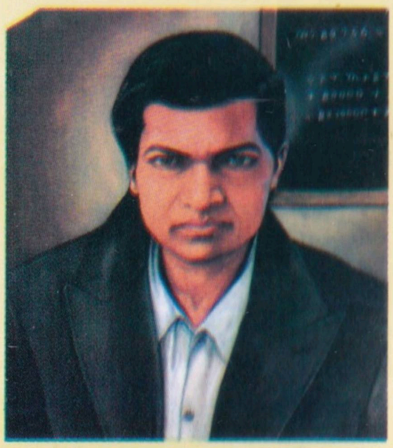

Printed at : S G Printpacks Pvt. Ltd., Noida.

प्रकाशक
विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान
संस्कृति भवन, सलारपुर रोड, कुरुक्षेत्र-136118 (हरियाणा)
01744-251903, 270515 / 9812520301, 7419996400, 7419996300, 7419996200

ISBN 978-93-85256-97-4
9 789385 256974
₹ 30.00

sgp@samskritisansthan.org www.samskritisansthan.com vidyabhartikurukshetra vidyabhartisss vbsss kkr

भारत में गणित की उज्ज्वल परम्परा

कक्षा- दशम्

वैदिक गणित

सूत्र-आनुरूप्येण

41^2	=	16	4	1
			4	
	=	16	8	1

उत्तर = 1681

41^3	64	16	4	1
		32	8	
	68	9	2	1

उत्तर = 68921

DG

भाग – 1

प्राचीन भारतीय गणित की एक झलक

अध्याय-1

भारत में खगोल शास्त्र की उज्ज्वल परम्परा

'प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं, चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ' अर्थात् ज्योतिष प्रत्यक्ष शास्त्र है, सूर्य, चन्द्र जिसके साक्षी हैं। इस वाक्य की सार्थकता से समस्त विश्व परिचित है। वेद के 6 अंग- छन्द, कल्प, ज्योतिष, निरुक्त, शिक्षा एवं व्याकरण प्रसिद्ध हैं। इन अंगों में ज्योतिष को वेद के नेत्रों की संज्ञा दी गई है। सभी वैदिक कार्यों के आरंभ में सकल्प करने की प्रक्रिया प्रचलित है, जिसमें ब्रह्मादिनारंभ से लेकर संकल्प करने के दिन तक की गणना का समावेश होता है। उक्त गणना ज्योतिष पर ही आधारित होती है।

ज्योतिष शास्त्र के 3 प्रमुख अंग हैं – (1) सिद्धान्त, (2) संहिता एवं (3) होरा। **सिद्धान्त** भाग में उपपत्ति सहित गणित प्रक्रिया का वर्णन है। **संहिता** के अन्तर्गत गणितीय सिद्धान्त के आधार पर समष्टिगत विषयों का समावेश होता है। इसके अन्तर्गत तिथि, वार, नक्षत्र आदि के मान, सूर्य-चन्द्र ग्रहणों के समय आदि विषय प्रतिपाद्य हैं। **होरा** में व्यक्तिगत फल, जन्मपत्र एवं वर्षफल निर्माण, संस्कारों एवं अनेक प्रकार के कार्यारंभ के काल का विवेचन करते हुए पर्व, महापर्व, व्रत-उत्सव आदि का निर्णय किया जाता है।

स्पष्ट है कि संहिता एवं होरा इन दोनों ज्योतिष विभागों का मुख्य आधार सिद्धान्त-गणितीय विभाग ही है। इन्हीं के आधार पर पञ्चांग का निर्माण किया जाता है, जिनमें तिथि, वार, नक्षत्र, मास, पक्ष, योग, करण आदि के मान अंकित होते हैं। भारतीय धर्मप्राण जनता के लिए ग्रहाचार के आधार पर व्रत, पर्व, महापर्व, जयंती, उत्सव आदि निर्णय पञ्चांग के अनुसार ही किए जाते हैं।

सिद्धान्त ज्योतिष में **दृग्गणितैक्य-समन्वय** शब्द प्रसिद्ध तथा बहुचर्चित है। आकाश में नेत्रों द्वारा देखे हुए ग्रह व नक्षत्रादि के

भिन्न-भिन मापदण्ड और करणग्रन्थों द्वारा गणितागत प्राप्त मापदण्डों का परस्पर सामञ्जस्य होना ही इस शब्द का तात्पर्य है।

जिस करण-ग्रन्थ का गणितागत मान, आकाश में वेधोपलब्ध ग्रह व नक्षत्रादि के मान के तुल्य होता है, वह करण-ग्रन्थ शुद्ध माना जाता है। वेधोपलब्धि यन्त्रों द्वारा ही होता है, अतएव वेधशाला में स्थित यन्त्रों को अतिप्राचीन काल से गणितज्ञ विद्वान महत्त्व देते चले आ रहे हैं।

पञ्चांगों की गणितीय प्रक्रिया की शुद्धता की जाँच का कार्य भारतीय परम्परागत ज्योतिष के यंत्रों से वेधशालाओं में की जाती रही है। यदि गणितीय निष्कर्षों के अनुसार ग्रह-नक्षत्रादि की स्थिति आकाश में मिलती है, तभी गणना को शुद्ध माना जाता है। यदि प्रत्यक्ष में वह स्थिति नहीं मिलती, तो शोधपूर्वक उनका निराकरण किया जाना आवश्यक है।

खगोलीय गणनाओं की प्रायोगिक समझ, उनके सत्यापन तथा खगोलीय स्थितियों के अवलोकन के लिए वेधशालाओं का निर्माण किया गया था। इसके अध्ययन हेतु वेधशालाओं को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

(1) प्राचीन वेधशालायें

(2) आधुनिक वेधशालायें

(1) प्राचीन वेधशालायें – इन वेधशालाओं में सतह पर स्थित ढांचे के माध्यम से खगोलीय गणनाओं का कार्य किया जाता है। जयपुर के महाराज सवाई राजा जयसिंह द्वितीय ने भारत में प्राचीन वेधशालाओं का निर्माण करवाया।

इन्होंने पाँच वेधशालाओं उज्जैन (1719ई०), दिल्ली (1724ई०), जयपुर (1728ई०), बनारस (1734ई०) तथा मथुरा (1737ई०) का निर्माण करवाया। उज्जैन कर्क रेखा के नजदीक स्थित होने के कारण प्राचीन समय से काल गणना का प्रमुख केन्द्र रहा है। यह प्रसिद्ध गणितज्ञ एवं खगोलशास्त्री वराहमिहिर की जन्म स्थली एवं साधना स्थली है। वर्तमान में यहाँ प्राचीन पाँच यन्त्र (सम्राट यन्त्र, नाड़ी वलय यन्त्र, दिगंश यन्त्र, भित्ती यन्त्र व शंकु यन्त्र)हैं।

प्राचीन यंत्रों की जानकारी–

1. **सम्राट यन्त्र** - सम्राट यन्त्र को धूप घड़ी भी कहते हैं। इस यंत्र के

बीच की सीढ़ी की दीवालों की ऊपरी सतह पृथ्वी के अक्ष के समानान्तर होने के कारण दीवालों के ऊपरी धरातल की सीध में रात्रि को ध्रुवतारा दिखाई देता है। इसके पूर्व तथा पश्चिम की ओर विषुवद वृत्त धरातल में समय बतलाने के लिये एक चौथाई गोल भाग बना हुआ है। जिनके माध्यम से हम प्रातः 6 बजे से शाम 6 बजे तक का उज्जैन का स्थानीय समय ज्ञात कर सकते हैं। गोल भाग पर घण्टे, मिनट एवं मिनट का तीसरा भाग खुदे हुए हैं। जिससे आज भी 20 सेकण्ड तक सही समय ज्ञात कर सकते हैं।

आकाश में ग्रह-नक्षत्र विषुवद् वृत्त से उत्तर तथा दक्षिण में कितनी दूर हैं, यह जानने के लिये भी इस यंत्र का उपयोग किया जाता है। चौथाई गोल के किनारे पर किसी ऐसे स्थान को ज्ञात कीजिये जहाँ से सीढ़ी की दीवाल के किनारे के किसी बिन्दु पर ग्रह-नक्षत्र का केन्द्र दिखाई दे, दीवाल के उस बिन्दु पर जो अंक है, वह उस देखे गये ग्रह-नक्षत्र की दूरी होती है, जिसे क्रांति कहते हैं।

2. **नाड़ी वलय यन्त्र** - विषृवद वृत्त के धरातल में निर्मित यह अत्यन्त अद्‌भुत यंत्र है। इस यंत्र से हम सूर्य, पृथ्वी के किस गोलार्द्ध में हैं यह प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। विषुवद् वृत्त के धरातल में निर्मित इस यंत्र के उत्तर-दक्षिण दो भाग हैं छः मास (22 मार्च से 22 सिम्बर तक) जब सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध में रहता है, तो यंत्र का उत्तरी गोल भाग प्रकाशित रहता हे तथा दूसरे छः मास (24 सितम्बर से 20 मार्च तक) जब सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में रहता है, तब दक्षिणी गोल भाग प्रकाशित रहता है। 21 मार्च एवं 23 सितम्बर को सूर्य जब भू-मध्य रेखा या विषुवत रेखा पर होता है, तो यंत्र के उत्तरी तथा दक्षिणी दोनों गोल भाग पर छाया रहती है।

यंत्र के दोनों गोल भाग पर एक-एक घड़ी बनाई गई है। इन दोनों भागों के बीच में पृथ्वी की अक्ष के समान्तर लगी कीलों की छाया से उज्जैन का स्पष्ट समय ज्ञात होता है। पृथ्वी के समान्तर लगी कीलों की छाया से छः माह उत्तरी तथा छः माह दक्षिणी घड़ी से उज्जैन का समय ज्ञात किया जा सकता है। इस प्राप्त समय में भी

सम्राट यंत्र के तरह अन्तर जोड़ा जाये तो भारतीय मानक समय प्राप्त कर सकते हैं। ग्रह, नक्षत्र अथवा तारों को वे उत्तरी आधे गोलार्द्ध में हैं या दक्षिणी आधे गोलार्द्ध में हैं उन्हें भी इस यंत्र के माध्यम से प्रत्यक्ष देख सकते हैं।

3. **दिगंश यंत्र** – इस यंत्र के बीच में बने गोल चबूतरे पर लगे हो के दण्ड में मुरीय यंत्र लगाकर ग्रह–नक्षत्रों के उन्नतांश (क्षितिज से ऊँचाई) और दिगंश (पूर्व–पश्चिम दिशा के बिन्दु से क्षितिज वृत्त में कोणात्मक दूरी) ज्ञात करते हैं।

4. **भित्ति यंत्र** – दीवार पर बना होने के कारण यह भित्ति यंत्र कहालता है। 180 अंशों के रूप में निर्मित अर्धवृत्त के दो भाग हैं। जिसके केन्द्र में लोहे की कील लगी हुई है। मध्याह्न काल में कील की छाया से सूर्य के उन्तांश, नतांश एवं दिनमान का वेध किया जाता है।

5. **शंकु यंत्र** – शंकु यंत्र के माध्यम से हम सूर्य की स्थिति को प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। क्षितिज वृत्त के धरातल में निर्मित इस यंत्र में 360 अंश के वृत्तकार चबूतरे पर एक स्तंभ में शंकु लगा हुआ है। शंकु की परछाईं से सूर्य की स्थिति का प्रत्यक्ष अवलोकन किया जा सकता है। शंकु की छाया से वृत्ताकार सतह पर 7 रेखाएँ खींची गई है।। जो 12 राशियों में सूर्य की स्थिति को प्रदर्शित करती हैं। बीच वाली सीधी रेखा भू–मध्य रेखा या विषुवत रेखा कहलाती है। 21 मार्च व 23 सितम्बर को जब सूर्य भू–मध्य रेखा या विषुवत रेखा पर लम्बवत् होता हे, तो शंकु की छाया पूरे दिन इस रेखा पर गमन करती हुई दृष्टिगोचर होती हे। इस दिन सूर्य की क्रांति शून्य अंश होती है। इस दिन, दिन व रात बराबर होते हैं अर्थात् 12 घण्टे का दिन और 12 घण्टे की रात होती है।

2. **आधुनिक वेधशालायें** – इन वेधशालाओं में नवीन उपकरण व आधुनिक तकनीक के प्रयोग द्वारा अवलोकन कर गणना, नवीन खोज व शोध का कार्य किया जाता है। इन वेधाशलाओं में आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक टेलीस्कोप, कम्प्यूटर, उपग्रह आदि यन्त्रों के द्वारा खगोलीय आंकड़े चित्र

प्राप्त कर शोध किया जा रहा हैं भारत की प्रमुख आधुनिक वेधशालाओं में कोडाईकनाल (तमिलनाडु), निज़ाम महल और जापाल रंगापुर (तेलंगाना, उत्तराखण्ड राज्य वेधशाला नैनीताल, वेनुबापु (तमिलनाडु), उदयपुर सोलर वेधशाला (राजस्थान), गुरुशिखर इन्फ्रारेड (माउण्टआबू) एवं उज्जैन में प्राचीन के साथ-साथ आधुनिक भी वेधशालायें हैं।

आधुनिक यन्त्रों की जानकारी –

1. **टेलिस्कोप** – रात्रि में आकाशीय अवलोकन एवं ग्रहीय स्थितियों की समझ हेतु टेलिस्कोप का उपयोग किया जाता है। टेलिस्कोप के माध्यम से रात्रि में चन्द्रमा की सतह, उसके गढ्ढे व पहाड़, शुक्र की कलाएँ, बृहस्पति की सतह, बैण्ड व उपग्रह, शनि की वलय, चन्द्र ग्रहण एवं अन्य ग्रह व तारों को स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। जब भी ग्रह या उपग्रह शाम के समय आकाश में दृष्टि गोचर होते हैं, तो वेधशाला में टेलिस्कोप के माध्यम से उन्हें दिखाया जाता है।
2. **सी.डी.शो** – वेधशाला में निर्मित 'हमारा सौर परिवार' नामक 40 मिनट का सीडी शो दिखाया जाता है। जिसमें आकाश गंगा में हमारे सौर परिवार की स्थिति, सूर्य का जीवन चक्र, सौर परिवार के आठों ग्रहों की जानकारी को चित्र सहित समाहित किया गया है।
3. **कार्यशील मॉडल** – वेधशाला में ग्रहण, सौर परिवार एवं स्टार ग्लोब के कार्यशील मॉडल द्वारा विषय को समझा जाता है।
4. **ग्रहण मॉडल** – इसके द्वारा सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, ऋतु परिवर्तन, अमावस्या या पूर्णिमा की स्थिति तथा चन्द्रमा की कलाओं को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।
5. **सौर परिवार मॉडल** – इस मॉडल में सूर्य एवं आठों ग्रहों को सूर्य से दूरी के क्रम में प्रदर्शित किया गया है। इस मॉडल की सहायता से ग्रहों की सूर्य से दीर, उनके आकार एवं रंग, ग्रहों का परिभ्रमण एवं पारगमन आदि की जानकारी प्रदान की जाती है।
6. **स्टार ग्लोब** – आकाशीय स्थिति की समझ हेतु स्टार ग्लोब अत्यन्त उपयोगी होता है। स्टार ग्लोब के माध्यम से हम खगोलीय विषुवत वृत्त, क्रांति वृत्तय, कर्क एवं मकर रेखा, राशियां, नक्षत्र, सप्तऋषि, कालपुरुष आदि प्रमुख तारा समूह, उत्तरी तथा दक्षिणी

गोलार्द्ध के तारों की स्थिति को स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं।

7. **तारामंडल** - वेधशाला में ग्लोब के अंदर तारामण्डल दिखाया जाता है। इस तारा मण्डल में डिजिटल प्रोजैक्अर के माध्म से डोम मे अर्द्ध गोलाकार स्थिति में खगोलीय फिल्में दिखाई जाती हैं।

8. **मौसम के यंत्र** - भारत मौसम विज्ञान विभाग द्वारा वेधशला में मौसम के आधुनिक उपकरण स्थापित किए गए हैं। इन यंत्रों में वर्षामापी, तापमापी, आद्रतामापी, हवा की गति व दिशा के लिए एनिमोमीटर व विण्ड वेन, वायुदाब ज्ञात करने के लिए इलेक्ट्रानिक बैरोमीटर स्थापित किए गए हैं। जिनके माध्यम से निर्बाध रूप से प्रतिदिन मौसम के आंकड़े संग्रहण कर मौसम केन्द्र व स्थानीय मीडिया को उपलब्ध करवाये जाते हैं।

9. **नक्षत्र वाटिका** - सूर्य एवं ग्रहों के तुलनात्मक आकार, उनके परिभ्रमण पथ, राशियों एवं नक्षत्रों की स्थिति, राशियों तथा नक्षत्रों में सम्बन्ध, तारा समूहों की स्थिति, विश्व मानक समय आदि की जानकारी हेतु नक्षत्र वाटिका का निर्माण किया गया है। नक्षत्र वाटिका के मध्य में सूर्य तथा आठ ग्रहों के प्रतिरूप बनाए गए हैं। इनकी सूर्य से दूरी का क्रम, तुलनात्मक आकार, मूल रंग तथा परिभ्रमण को दर्शाया गया है। प्रथम वृत्ताकार पथ में 30-30 अंश के आधार पर 12 राशियों, उनके तारा समूह व आकार को दर्शाया गया है तथा प्रत्येक राशि से संबंधित वनस्पति को लगाया गया है। द्वितीय वृत्ताकार पथ में $13^0\ 20'$ के आधार पर 27 नक्षत्रों को दर्शाया गया है। चार रंग के ग्रेनाइट के द्वारा प्रत्येक नक्षत्र के $3^0\ 20'$ के चारों चरणों को दर्शाया गया है। नक्षत्र वाटिका के वृत्ताकार पथ में राशियों व नक्षत्रों का समन्वय इस प्रकार से किया गया है, कि प्रत्येक राशि से संबंधित नक्षत्रों तथा उसके चरणों का संबंध प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं।

वेधशाला में यंत्रों का निर्माण एवं खगोलीय गणनाओं की समझ, उच्च स्तर के गणितीय ज्ञान के बिना संभव नहीं है। अत: हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि, प्राचीन समय में हमारा गणितीय ज्ञान कितने उच्च स्तर का था।

अध्याय – 2

भारतीय काल गणना - समय की माप

लोक व्यवहार, संगीत तथा साहित्य में हमें पल दो पल, घड़ी दो घड़ी, युगों-युगों तक निमेष, कल्प-आदि शब्द सुनने तथा पढ़ने में आते रहते हैं। ये शब्द **भारतीय काल गणना** की इकाईयाँ हैं। **पर्वों, पंचांग तथा खगोलीय घटनाओं** के अध्ययन में भारतीय काल गणना की जानकारी होना आवश्यक एवं उपयोगी है।

इस अध्याय में हम भारतीय काल गणना की सूक्ष्म तथा दीर्घ इकाईयों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

समय की माप

समय की सबसे छोटी माप है परमाणु

2 परमाणु	=	1 अणु
3 अणु	=	1 त्रसरेणु
3 त्रसरेणु	=	1 त्रुटि

कमल की पंखुड़ी को सुई से छेद करने में जितना समय लगता है, उतने समय को त्रुटि कहते हैं।

100 त्रुटि	=	1 वेध
3 वेध	=	1 लव
3 लव	=	1 निमेष
3 निमेष	=	1 क्षण

पलक झपकने को निमेष और उन्मेष कहते हैं। आँख बन्द करके खोलने को पलक झपकना कहते हैं। निमेष का अर्थ है आँख बन्द होना और उन्मेष का अर्थ है आँख खुलना।

पलक झपकने में आँख बन्द होने में जितना समय लगता है, उतने समय को निमेष कहते हैं। तीन निमेष का एक क्षण होता है। 'क्षण' शब्द से हम परिचित हैं।

5 क्षण	=	1 काष्ठा
15 काष्ठा	=	1 लघु
15 लघु	=	1 घटी

एक घनाकार तांबे का बर्तन जिसमें 1 सेर पानी आ सके लें। बीस गुंजा भार की चार अंगुल लम्बी सोने की सींक से उस पात्र में छेद करें। एक बड़े पात्र में पानी भर कर उसमें यह छेद वाला पात्र रखें। जितने समय में यह पात्र पानी से भरकर डूब जायेगा उतने समय को 1 घटी या घटिका कहते हैं।

विशेष ध्यान दें : 1 घटी = 24 मिनट

2 घटी	=	1 मुहूर्त
7½ घटी	=	1 प्रहर
1 प्रहर	=	3 घण्टे
8 प्रहर	=	1 दिन-रात
1 प्रहर	=	2 चौघड़िये
16 चौघड़िये	=	1 दिन-रात

DC

1 घटी	=	24 मिनट
60 घटी	=	24 घण्टे
1 चौघड़िया	=	96 मिनट = 1½ घण्टा (औसत से)
1 पल	=	24 सैकण्ड = 2½ विपल = 1 सैकण्ड
1 सैकण्ड	=	33,750 त्रुटि 4 सैकण्ड = 1 असु
24 घण्टा	=	1 दिन
15 दिन	=	1 पखवाड़ा 2 पखवाड़े = 1 मास
2 मास	=	1 ऋतु 3 ऋतु = 1 अयन
2 अयन	=	1 वर्ष

वर्ष को **संवत्सर** भी कहते हैं।

1 मास के 30 दिन और 1 वर्ष के 12 मास भी कह सकते हैं।

दो पखवाड़ों के नाम	–	कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष
बारह मास के नाम	–	चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन।
छह ऋतुओं के नाम	–	ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर और बसंत
दो अयनों के नाम	–	उत्तरायण और दक्षिणायन

- (चार लाख बत्तीस हजार) 4,32,000 वर्ष = 1 कलियुग
- (आठ लाख चौसठ हजार) 8,64,000 वर्ष = 1 द्वापरयुग
  (2 कलियुग = 1 द्वापरयुग)
- (बारह लाख छियानबे हजार) 12,96,000 वर्ष = 1 त्रेतायुग
  (3 कलियुग = 1 त्रेतायुग)
- (सत्रह लाख अट्ठाईस हजार) 17,28,000 वर्ष = 1 सत्ययुग
  (4 कलियुग = 1 सत्ययुग)
- 432 सहस्राब्दी = 1 कलियुग
  2 कलियुग = 1 द्वापरयुग
  3 कलियुग = 1 त्रेतायुग
  4 कलियुग = 1 सत्ययुग

सत्ययुग + त्रेतायुग + द्वापरयुग + कलियुग = महायुग = 43,20,000 वर्ष
महायुग को चतुर्युगी भी कहते हैं।

71 महायुग अथवा चतुर्युगी = 1 मन्वन्तर

मन्वन्तर = मनु + अन्तर

एक मनु से दूसरे मनु के बीच समय की जो अवधि है उसे मन्वन्तर कहते हैं।

1 मन्वन्तर = 43,20,000 × 71
= 30,67,20,000 वर्ष (तीस करोड़ सड़सठ लाख बीस हजार) वर्ष

कुल 14 मन्वन्तर हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं।

1. स्वायम्भुव	2. स्वारोचिष	3. औषमि (औत्तमि)
4. तामस	5. रैवत	6. चाक्षुष
7. वैवस्वत	8. सावर्णिक	9. दक्षसावर्णिक
10. ब्रह्मसावर्णिक	11. धर्मसावर्णिक	12. रुद्रसावर्णिक
13. देवसावर्णिक	14. इन्द्रसावर्णिक	

वर्तमान में वैवस्वत मन्वन्तर चल रहा है।

14 मन्वन्तरों का 1 कल्प होता है।

30 कल्पों के नाम

1. श्वेत	2. नीललोहित	3. वामदेव
4. रथंतर	5. रौरव	6. देव
7. बृहत्	8. कंदर्प	9. पद्म
10. ईशान	11. तम	12. सारस्वत
13. उदान	14. गरुड़	15. कौर्म
16. नारसिंह	17. समान	18. आग्नेय
19. सोम	20. मानव	21. तत्पुरुष
22. वैकुंठ	23. लक्ष्मी	24. सावित्री
25. घोर	26. श्वेतवारह	27. वैराज
28. गौरी	29. माहेश्वर	30. पितृ

वर्तमान में श्वेतवाराह कल्प चल रहा है।

एक कल्प अर्थात् ब्रह्मा का एक दिन उतनी ही बड़ी उनकी रात्रि, 360 महाकल्प का ब्रह्मा का एक वर्ष होता है। इस प्रकार 100 वर्ष तक एक ब्रह्मा की आयु और यह काल तो भगवान विष्णु का एक निमेष (आँख की पलक झपकने के काल को निमेष कहते हैं) होता है और विष्णु के बाद रूद्र का काल आरंभ होता है, जो स्वयं कालरूप हैं और अनंत हैं, इसीलिए कहा जाता है कि काल अनंत है।

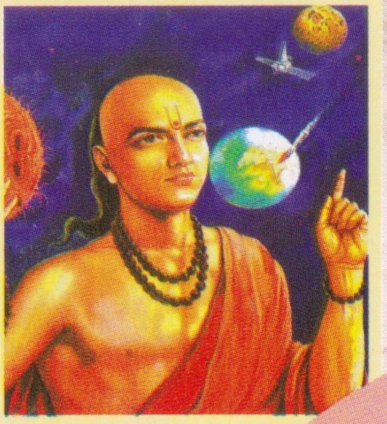

ब्रह्मगुप्त प्रमेय

कर्णाश्रितभुजघातैक्यम् उभयो यथा
अन्योन्यभाजितं गुणयेत्।
योगेन भुजप्रतिभुजवधयो:
कर्णौ पदे विषमे॥

चतुराहतवर्ग समै: रूपै:
पक्षद्वयं गुणयेत्।
अव्यक्तवर्गरूपैर्युक्तौ
पक्षौ ततोमूलम्॥

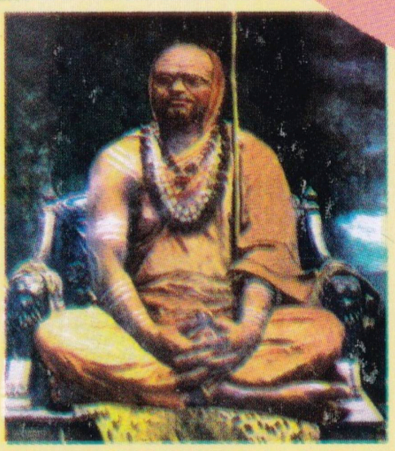

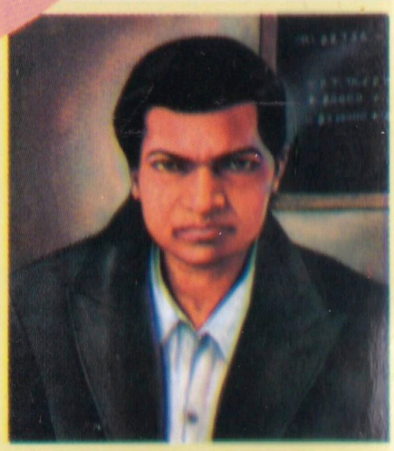

Printed at : S G Printpacks Pvt. Ltd., Noida.

प्रकाशक

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान

संस्कृति भवन, सलारपुर रोड, कुरुक्षेत्र-136118 (हरियाणा)

01744-251903, 270515 / 9812520301, 7419996400, 7419996300, 7419996200

ISBN 978-93-85256-98-1

₹ 30.00

sgp@samskritisansthan.org www.samskritisansthan.com vidyabhartikurukshetra vidyabhartisss vbsss kkr